Peer Reviewed/
Refereed Journal

ISSN -PRINT-2231-3613ONLINE2455-8729
International Educational Journal
CHETANA
Impact Factor SJIF=4.157

Received on 08th Feb. 2019, Revised on 09th Feb. 2019; Accepted 15th Feb. 2019

आलेख

मूल्य शिक्षा द्वारा छात्रों का सार्वभौमिक विकास

* डॉ. सीताराम पाल, असिस्टेंट प्रोफेसर
विशेष शिक्षा संकाय,श्रवण बधितार्थ विभाग
डॉ. शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय,मोहान रोड लखनऊ (उत्तर प्रदेश)

मुख्य शब्द – शारीरिक शक्ति, बौद्धिक क्षमता एवं रचनात्मकता आदि।

जिस शिक्षा से हम अपना जीवन निर्माण कर सके, मनुष्य बन सकें, चरित्र गठन कर सके और विचारों का सामंजस्य कर सकें। वही वास्तव में शिक्षा कहलाने योग्य है।

'स्वामी विवेकानंद'

सार :समाज में छात्रों एवं युवाओं को महत्वपूर्ण समझा जाता है क्योंकि युवाओं में अनेक प्रकार की योग्यताएँ जैसे कि शारीरिक शक्ति, बौद्धिक क्षमता एवं रचनात्मकता पायी जाती हैं। साथ ही साथ उनमें चुनौतियों का सामना करने की अत्यधिक हिम्मत व साहस, मुश्किलों को पार करने की दृढ़ता, नई-नई खोज करने की तमन्नाओं विशेष कार्य करने का उत्साह होता है। इसलिए माता - पिता, परिवार,समाज,देश तथा विश्व सबकी नजर युवाओं पर होती है। भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी भी इस बात को कई बार मंच से साझा कर चुके हैं।

लेकिन आज देश का युवा जिस दिशा में कदम रख दिया है उससे न सिर्फ परिवार एवं समाज बल्कि पूरा देश शर्मसार हो रहा है। सच्ची दुनिया के बजाय चकाचौंध की दुनिया में आज का छात्र रातों-रात वह सब कुछ हासिल कर लेना चाहता है जो वह पूरे जीवन में नहीं कर सकता। अपनी शौक पूरी करने के लिए वह कोई भी अनैतिक कार्य करने को विवश हो गया है जिसका जीता-जागता उदाहरण आतंकवादी,नक्सलवादी एवं मावोवादी जैसी गतिविधियों में शामिल होना। इसमें सिर्फ उस युवा का दोष नहीं बल्कि माता-पिता,शिक्षक, समाज एवं प्रशासन का है जिन्होंने आरंभिक स्तर की शिक्षा में आध्यात्मिक एवं मूल्यपरक शिक्षा की तालीम सही दिशा में प्रदान नहीं की। आज छत्र की बौद्धिक शक्ति में भले ही वृद्धि हुई हो परंतु अभिवृत्ति सम्बन्धी कौशलों में अत्यंत कमी देखी गई है। सर्वविदित है कि प्रत्येक विचार हमारी अभिवृत्ति से प्रेरित होते हैं इसलिए सकारात्मक अभिवृत्ति के बजाय व्यक्ति में नकारात्मक अभिवृत्ति को जन्म देते हैं। यह नकारात्मक अभिवृत्ति व्यक्ति को अनैतिक एवं भ्रष्ट बना देती है जिससे छात्र का विकास रूक जाता है। अतः छत्रों के सार्वभौमिक

विकास के लिए आवश्यक है कि माता-पिता, शिक्षक तथा समाज द्वारा मूल्यपरक शिक्षा प्रदान की जाय एवं सकारात्मक अभिवृत्ति विकसित की जाय।

प्रस्तावना :

समाज केवल भौतिक सुविधाओं का संग्रह मात्र नहीं है। विज्ञान की लक्ष्यविहीन दौड़ में हाथ लगी कुछ भौतिक उपलब्धियां ही श्रेष्ठ समाज का मापदण्ड नहीं हो सकती। समाज अमूर्त होता है और यह प्रेम, सद्भावना, आपसी भ्रातृत्व, नैतिकता एवं मानवीय मूल्यों के सहारे संचालित होता है। एक प्रगतिशील एवं श्रेष्ठ समाज की कसौटी इन्हीं मूल्यों से परिभाषित होते हैं। आज इन मूल्यों का घोर अभाव नहीं बल्कि भयंकर अकाल हो गया है। शैक्षणिक जगत जहां से समाज के आधारभूत ढाँचे का निर्माण होता है, इन मूल्यों के अभाव से अछूता नहीं रहा है। इसका सबसे जीता-जागता उदाहरण हाल ही में जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय दिल्ली में अपने ही राष्ट्र के विरोधी नारे लगाना है। इस प्रकार की घटनाएँ आए दिन हो रही हैं। कभी शिक्षक द्वारा छात्रों की पिटाई तो कभी छात्र द्वारा शिक्षकों पर हमला। आज नैतिक पाटन के कारण ही खुले आम माँ एवं बहनों की आबरू लूटी जा रही है।

आज विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने के बजाय उग्र-प्रदर्शन, राजनीति, हड़ताल, तोड़-फोड़, नशीली दवाओं का सेवन, मनोरंजन के साधनों तथा वाह्यमुखता में लाने वाली बातों में अधिक रुचि लेते हैं और बहुत से अध्यापक भी रुचिपूर्वक शिक्षण कार्य नहीं करते हैं।

शिक्षा को सुधारने के लिए अथवा विद्यार्थियों के श्रेष्ठ-मार्ग दर्शन एवं चरित्र-निर्माण के नाम पर समय-समय पर शिक्षा आयोग गठित किए जाते रहे हैं परन्तु नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा को हमारे पाठ्यक्रम में यथार्थ रूप में स्थ्यान नहीं दिया गया। परिणाम यह हुआ के शिक्षा के स्तर में गिरावट जारी रही। अब बड़े-बड़े विद्वान एवं वैज्ञानिक अपराध, भ्रष्टाचार एवं अनैतिकता को समाप्त करने के उपाय बाहर खोज रहे हैं जबकि वास्तविक समस्या की जड़ छात्र के अंदर विद्यमान है जिसे दंड या भय के द्वारा स्थायी रूप से नहीं सुधारा जा सकता है। ऐसे में आवश्यक है कि छात्रों में नैतिक मूल्यों का विकास उनके जीवन के प्रारम्भ से ही माता-पिता द्वारा किए जाए जिससे छात्र विद्यालयों एवं अन्य परिवेश में अपने नैतिक दायित्वों का निर्वाहन कर सकें।

मानव के जीवन में मूल्यों का महत्व बहुत अधिक है। उसके जीवन का प्रत्येक कार्य किसी न किसी मूल्य से संबन्धित होता है। यह मूल्य वह अपने जीवन के प्रारम्भिक वर्षो से ही सीखने लगता है और धीमे-धीमे अपने अंतर में ग्रहण कर लेता है। यदि उसका पालन-पोषण उत्तम वातावरण में हुआ है जहां उच्च नैतिक मूल्य जीवन के लक्ष्य प्रतिपादित होते है तो वह उन्हें ही अपने अंदर में आत्मसात कर लेता है और यदि ऐसा नहीं है तो या तो वह किन्हीं भी मूल्यों को ग्रहण नहीं कर पाता या निम्न श्रेणी के मूल्यों को अपने जीवन का आधार बना लेता है। मूल्यों की श्रेष्ठता निर्धारित करने में तथा उन्हें आत्मसात करने में शिक्षा का बहुत बड़ा योगदान है।

मूल्य के आधार पर ही मनुष्य अपने जीवन दृष्टिकोण को बनाता है। मूल्य ही मानव जीवन को अर्थ, उच्चता तथा श्रेष्ठता प्रदान करते हैं। मानव न्याय, प्रेम इत्यादि को उचित मानता है। यह उसके जीवन के आदर्श बन जाते हैं। यह निर्णय लेना कि न्याय, प्रेम, सत्य, मित्रता आदि उचित तथा उत्तम है उसे शिक्षा द्वारा ही सिखाया जा सकता है। शिक्षा उसे विभिन्न विकल्पों में से वह विकल्प

चुनना सिखाती है जो मानव तथा समाज दोनों के लिए उचित है। वह विद्यार्थी को उचित, अनुचित, उत्तम तथा निम्न अथवा अच्छा और बुरा का अंतर सिखाती है। किन्तु यहाँ मुख्यतया प्रश्न जैसा कि पहले कहा गया यह है कि कैसे निर्धारित किया जाए कि यह विकल्प उचित है या अनुचित, अच्छा या बुरा। उत्तर दिया जा सकता है कि जो हमें मूल्यवान लगे वह ही उचित या उत्तम है। किन्तु प्रत्येक व्यक्ति की अपनी निजी धारणा होती है एक व्यक्ति को जो मूल्यवान लगता है वह दूसरे को व्यर्थ लग सकता है। तो क्या प्रत्येक व्यक्ति के लिए मूल्य विभिन्न होंगे। यह भी हो सकता है कि कोई वस्तु जो इस समय मूल्यवान लगती हो कुछ समय बाद मूल्य रहित लगे। तो क्या मूल्य समय, स्थान या व्यक्ति केन्द्रित होते हैं। इस कठिनाई का हल हम मूल्य सम्बन्धी विभिन्न दृष्टिकोणों पर ध्यान देकर खोजने का प्रयास कर रहे हैं।

गीगर महोदय (Geiger)कहते हैं कि" मूल्य मानव विकल्पों के परिणाम प्रतिद्वंदी मानव रुचियों के बीच होते हैं।

शिक्षा का लक्ष्य :शिक्षा एक ऐसा बीज है जिसके जीवन एक फलदार वृक्ष बन जाता है। जिस प्रकार फलदायी वृक्ष की यथार्थता या सफलता तब मानी जाती है जब वह फल-फूलों से लड़ जाता है। उसी प्रकार मानव जीवन भी एक वृक्षा के समान है। जब जॅक उसके जीवन के प्रत्येक व्यवहार मेन सेवा, परोपकार,धैर्य, त्याग, उदारता तथा पवित्रता जैसे गुण नहीं लगते तब तक उसके जीवन को पूर्ण जीवन या दिव्य जीवन नहीं कहा जा सकता है। शस्त्र, वेद एवं शिक्षाविदों की माने तो शिक्षा का लक्ष्य छत्रों का सार्वभौमिक विकास करना है।

मूल्य के क्षेत्र :

सम्पूर्ण बौद्ध शिक्षा प्रणाली में बौद्ध दर्शन का मध्यमा- प्रतिपदा- सिद्धान्त परिलक्षित होता है। बौद्ध-दर्शन में जीवन के किसी ऐकांतिक मूल्य पर आग्रह दिखाई नहीं देता। जैनों के समान न तो पूर्ण विरक्ति पर आग्रह है न चारवाक दर्शन के समान केवल सांसारिक- सुख को ही सर्वस्व माना गया है।

1. **आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक विषय के बीच मध्यम मार्ग -:**बौद्ध शिक्षा के पाठ्यक्रम का अवलोकन करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि बौद्ध दर्शन में एक ओर बौद्ध धर्म की शिक्षा पर आग्रह है तो दूसरी ओर व्यावहारिक जीवन की शिक्षा की उपेक्षा नहीं की गई है। यदि एक ओर ध्यान, चिंतन-मनन पर आग्रह है, तो दूसरी ओर आजीविका की शिक्षा पर भी बल दिया गया है।
2. **नैतिक मूल्य -:** बौद्ध दर्शन द्वारा मनुष्य के व्यक्तित्व का जो विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, उसमें यह स्पष्ट दिखाई देता है कि मनुष्य के विकास में नैतिक कारण कार्य-सिद्धान्त सक्रिय रहता है। बौद्ध दर्शन के अनुसार हमारा संकल्प हमें निश्चित रुप से नैतिक बनाता है। बौद्धों द्वारा प्रतिपादित द्वादश निदान (जन्म-मरण का कारण सिद्धान्त) के अनुसार सारी सृष्टि हमारे संकल्प का परिणाम है, अतः यदि हम सतसंकल्प करें तो निश्चित रूप से नैतिक भी बन सकते हैं।
3. **शारीरिक मूल्य -:**यद्यपि इच्छाओं का त्याग तथा इंद्रियों का दमन नैतिक जीवन के लिए आवश्यक है, तथापि शारीरिक-स्वास्थ्य की उपेक्षा करना उचित नहीं है। बुद्धि के अनुसार,"शरीर को स्वस्थ रखना हमारा कर्तव्य है, अन्यथा विवेक का दीपक प्रज्ज्वलित नहीं किया जा सकता तथा मन को स्वच्छ तथा दृढ़ नहीं बनाया जा सकता ।

4. **आर्थिक मूल्य -:**बौद्ध-दर्शन में एक ओर सांसारिक सुखों की लालसा का त्याग करने का उपदेश दिया गया है तो दूसरी ओर उचित विधि से आजीविका कमाने के भी उपदेश हैं। बिहारों में यद्यपि कोई भिक्षु सम्पत्ति नहीं रख सकता था, परंतु संघ को सम्पत्ति रखने का अधिकार था। इस प्रकार आर्थिक मूल्य की उपेक्षा न करके तथागत ने इसमें भी मध्यम-मार्ग का अवलंबन करने का उपदेश दिया।
5. **सामाजिक मूल्य -:**अन्य भारतीय दर्शनों का आग्रह वैयक्तिक उन्नति तथा वैयक्तिक विकास पर रहा, इसीलिए अध्यापन-प्रणाली भी वैयक्तिक बनी रही। बौद्ध शिक्षा प्रणाली में छोटे-छोटे समूहों में शिक्षा प्रदान करने की प्रथा आरंभ हुई। इन समूहों में शान्ति तथा समन्वय बनाए रखने के लिए अनुशासन के नियम बनाए गए और इस प्रकार सामाजिक नियम तथा अनुदेशों के पालन पर आग्रह रखा गया। बौद्ध दर्शन के अनुसार मनुष्य कोई भी कार्य करे, वह चाहे गृहस्थ हो अथवा भिक्षु, वह नैतिक जीवन का पालन कर सकता है। अपने आपको सामाजिक हित के लिए समर्पित करके मनुष्य सुख-शान्ति तथा आनन्द प्राप्त कर सकता है जबकि तृष्णा, आकांक्षाएँ आदि स्वार्थी वृत्तियाँ केवल दुःख का कारण बनती है।

   सम्पूर्ण बौद्ध शिक्षा प्रणाली में भगवान बुद्ध की मध्यमा-प्रतिपदा परिलक्षित होती है।

   "भगवद गीता" में स्थितप्रज्ञ के लक्षण बताए हैं - जो सुख-दुःख, हर्ष-शोक, जय-पराजय इत्यादि द्वंदों में हर परिस्थिति में समान रूप से (स्थिर)-सम्यक भाव से रहता है उसकी प्रज्ञा स्थिर है। अतः गीता शिक्षा का ग्रंथ है। जीवन की राहों में चलते-चलते जो परेशानियाँ आती हैं, मुसीबत के पहाड़ आते हैं, काँटों के जंगल आते हैं व्यथा-वेदना-निराशा-संताप के तूफान आते हैं - कोई सहारा कोई आशा की किरण न मिले ऐसी परिस्थिति में ले जो पार कराये वही विद्या है। हम परेशान क्यों हैं? किन बातों से है? हमारी ही नकारात्मक श्रंखलाओं से भ्रांतियाँ, मिथ्या मान्यताएं और उलझी हुई बुद्धि के कारण। हमारी अनंत इच्छाओं और अपेक्षाओं के कारण। हम स्पर्धा की धुन में उलझ गए है, अतः तनाव में रहते हैं। हम सदा एक दूसरे को देखते है - तुलना करते है। अतः ईर्ष्या, निंदा, नफरत, घृणा, विरोध, वैमनस्य,संघर्ष में जल्दी फंस जाते हैं। हमारी वृत्तियाँ, प्रचलन एवं आदतें सदा नकारात्मक होने से हम परेशान होते हैं। हमारी वृत्तियाँ-हमारे वश में न होने के कारण अहंकार, क्रोध, लोभ, आसक्ति, काम-कामनाओं, वहम और पूर्वग्रहों में हमारी बुद्धि बंद हो जाती है। इन सबसे मुक्ति चाहिए - यह कार्य विद्या का है।

   परिपक्वता ज्ञान या शिक्षा से आती है। जैसे पका फल मधुर होता है, वैसे व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास या परिपक्वता अर्थात प्रसन्नता, मधुरता, सौहार्दता, सहनशीलता, सेवा-परोपकारिता इत्यादि मूल्योंका जीवन व्यवहार में आना। एक जमाना था- गुरुकुल प्रणाली थी। गुरु का स्थान माता-पिता और राज से भी ऊंचा था। उस प्रणाली से व्यक्ति और समग्र समाज की जीवन व्यवस्था में मूल्यों का आधिपत्य था। सत्य, अहिंसा,अपरिगृह,अस्तेय,नीतिमत्ता,शान्ति परस्पर स्नेह और सेवाभाव जीवन के केंद्र में थे। राजा-प्रजा शाहूकार सबके जीवन में संतोष रूपी धन था। विरोध-वैमनस्य अशांति परिगृहह,व्यथा-वेदना-राग-शोक का आधिपत्य नहीं था। चारित्रिक धन था। शान्ति, आनंद, प्रेम संवादिता समृद्धि थी। संतुष्टता लक्ष्मी के समान थी। आज जीवन का केंद्र बिन्दु-पैसा बन

गया है। गुरु राजविद्या, व्यवहार विद्या, ज्योतिष विद्या , शास्त्र विद्या के सिखाने के पूर्व ध्यान, प्रार्थना, मौन, त्याग तपस्या, सेवा समानता इत्यादि मूल्यों की शिक्षा देते थे। राजकुमार और सामान्य ब्राह्मण बालक (कृष्ण-सुदामा) की परवरिश समानता से होती थी। गुरु के आगमन पर राजा उठकर आतिथ्यभाव से नमन करता था। उदाहरण - वशिष्ठ, विश्वामित्र,व्यास आदि। ये आध्यात्मिक विद्या द्वारा जीवन में मूल्यों का आत्मसात कराते थे।

रामायण-महाभारत में मूल्य-सम्पन्न जीवन प्रणाली का वर्णन मिलता है। उस समय के समग्र समाज में मूल्यों का विजय और मूल्यहीन व्यक्तियों का नाश बताया गया है। राजा विक्रम की उदारता,प्रजावत्सलता, सेवाभाव।

चाणक्य द्वारा मूल्यवान राज्य सत्ता की स्थापना केवल एक ही कलिंग देश पर विजय पाने के बाद राजा अशोक ने पश्चाताप किया और बौद्ध धर्म को स्वीकार कर लिया। सिद्धार्थ(गौतम बुद्ध) और (महावीर) दोनों राजकुमारों द्वारा लोककल्याण अर्थ गृह त्याग/ त्याग तपस्या-करुणा-सेवा के उत्कृष्ट-मूल्यों का सृजन आध्यात्मिकता द्वारा/ ध्यान, ताप, मौन, चिंतन,सेवा, सुश्रुषा, क्षमा तथा करुणामय जीवन द्वारा तथा स्वामी विवेकानन्द की प्रतिमा स्वामी रामकृष्ण की छाया में आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा प्रस्फुटित हुई। महर्षि अरविंद, महात्मा गांधी, रवीन्द्रनाथ टैगोर आदि महान विभूतियों ने मूल्य शिक्षा का स्त्रोत आध्यात्मिकता को ही बताया है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली विदेशी शासकों की देन है। मेकाले ने अंग्रेज शासन को सुचारू रूप से चलाने के लिए, क्लर्क पैदा करने की शिक्षा पद्धति अपनाई। उसमें आज तक कोई परिवर्तन नहीं ला सका।

आजादी के बाद राधाकृष्णन कमीशन, कोठारी कमीशन, राजीव गांधी 'न्यू एज्यूकेशन पालिसी'- इत्यादि द्वारा नैतिक शिक्षा योग शिक्षा के लिए अनेक सुझाव दिये गए हैं। करोड़ों रुपये खर्च होने के बावजूद भी आज की शिक्षा प्रणाली से चरित्रवान, आत्मविश्वास सभर, मूल्यवान व्यक्तित्व वाली युवा पीढ़ी नहीं उभर पाई है। एक यूनिवर्सिटी द्वारा प्रति वर्ष 10 हजार, 15 हजार या 20 हजार स्नातक अनुस्नातकों इंजीनियर्स, डाक्टर्स, लायर्स, टीचर्स, प्रोफेसर्स या प्रोफेसनल्स जैसे कि B.B.A, M.B.A, I.I.M. इत्यादि डिग्रीधारक पैदा होकर निकलते है, परंतु इनमें से चरित्रवान, प्रामाणिक, निष्ठावान, सेवा-सद्भाव और परोपकार की भावना वाले कितने पैदा होते होंगे?

वर्तमान शिक्षा प्रणाली का डिग्री और नौकरी से संबंध जुड़ गया है। जीवन प्रणाली के मूल्यों से सम्बन्ध नहीं रहा। यही करुणता है कि हमारी संस्कृति के सत्व को आज की शिक्षा ने भुला दिया है। सनातन धर्म, वैदिक संस्कृति और अध्यात्म विद्या, दर्शन शास्त्र, आयुर्वेद, खगोल विद्या, भू-परीक्षण विद्या, शिल्प-स्थापत्य, संगीत-नृत्य आदि कलाओं को और शुद्ध, स्नेहयुक्त, पारिवारिक एवं समाज व्यवस्था आदि प्राचीन विरासत से हमने मुँह मोड लिया है

और उसकी जगह पाश्चिमात्य भोग-विलासमय, मर्यादाहीन संस्कृति को अपना बना लिया है। फिल्म टी॰वी॰ और साहित्य में पाश्चात्य भोग प्रधान संस्कृति से पूर्ण दृश्यों को आकंठ पान करने में नई पीढ़ी डूबी हुई है।

अनास्था, आत्म गौरवहीनता, अमर्यादा और भौतिक वासनाओं के आकंठ में डूबी युवा पीढ़ी गुमराह है। इसे कौन थाम सके? कौन बचा सके? सही दिशा दिखाने का अधिकार किसी को भी है तो एक मात्र शिक्षा क्षेत्र को ही है। शिक्षक मार्गदर्शक हो सकता है। परिवर्तन की लहर का ध्वज बन सकता है। हमारी प्राचीन गौरवपूर्ण जीवन प्रणाली की ओर दृष्टिपात कराकर सोई चेतनाओं को जगा सकता है। आशाओं का दीप जला सकता है। आज की शिक्षा प्रणाली की मर्यादा(कमी) बताते हुये भारत के सुप्रसिद्ध शिक्षाविद स्व गवर्नर श्री प्रकाश जी ने कहा था, "आज की युवा पीढ़ी के लिए देश या शिक्षा के पास कोई प्रेरणादायी ध्येय नहीं है। इसीलिए आज की पीढ़ी हताश और दिशाविहीन है। 1947 के पहले महात्मा गांधी जी ने समूचे देश को आजादी का ध्येय दिया था और साथ-साथ वे राहबर भी बने थे। आज कोई मूल्यवान नेतृत्व नहीं है। जो भी नेता, राजनीति, धर्म, शिक्षा किसी भी क्षेत्र में-मूल्यविहीन चारित्र भ्रष्ट और गिरे हुये है। वे भला कैसे मार्गदर्शक बन सकते हैं?" अगर कहीं आशा की चिंगारी नजर आ सकती है तो वह कार्य विद्यालय में हो सकता है। विद्यालय देवी सरस्वती का स्थान है जहां से रोशनी पैदा की जा सकती है। विद्यालयों में आने वाले बच्चे-विद्यार्थी छोटी-छोटी चैतन्य शक्ति आत्माएं है। उन दीपकों को सही विद्या द्वारा, आध्यात्मिक शक्ति और ज्ञान द्वारा अपने स्वरूप परमज्योति परमात्मा के स्वरूप का सही ज्ञान देकर साक्षात्कार कराया जाय तो खोई हुई आत्मा की संपत्ति(जीवन के मूल्य) हम फिर से उजागर कर सकते है। वर्तमान शिक्षा में आध्यात्मिक और मूल्य शिक्षा की अनुपस्थिति ही विलुप्त कड़ी है।

महान शिक्षाविद् रवीन्द्रनाथ टैगोर जी ने शिक्षक की अभिवृत्ति पर चिंता जताते हुये लिखा है -

को लोइबो मोर कार्य, कहे सांध्य रवि,
सुनिया जगत रहे, निरूत्तर छवि,
माटिर प्रदीप छिलो, से कोहिबों स्वामी,
आमार जेटुकु साध्य, कोरिबो ता आमी।

जगत को प्रकाश देने का कार्य कौन करेगा? सारा जग सुनकर निरूत्तर रह जाता है। किसी झोपड़ी में से मिट्टी का कोई दीपक बोल उठा, "हे स्वामी, मुझसे जितना हो सकेगा, मैं आपका कार्य करूँगा।"

अध्यापक अपने सामने वर्ग खण्ड में बैठे हुये मासूम चैतन्य फूलों को आध्यात्मिक ज्ञान व अपने जीवन व्यवहार द्वारा मूल्यों की शिक्षा देकर विद्यालय में तो रोशनी फैला सकता है-

इतना तो कर सकता है। इस जहां से विदा लेने के पहले कुछ अच्छा कार्य करके विदाई ले तो जीवन सफल बन जाएगा।

सारांश :-

मूल्य शिक्षा का आधार हमारी संस्कृति एवं सभ्यता है जिसका वास्तविक पोषक हमारे शास्त्र हैं जो हमारे आचरण एवं व्यवहार को गलत दिशा में जाने से रोकते हैं एवं सद्मार्ग की ओर प्रक्षेपित करते हैं। शास्त्र कहते हैं कि वास्तविक विद्या से विनय, विनय से पात्रता, पात्रता से धन, धन से परमसुख प्राप्त होता है। परंतु आज के परिवेश में विनय अथवा सदाचार की विलुप्तता दिखाई देती है। भारतीय संस्कृति एवं छत्रों के अवमूल्यन को देखते हुये पूर्व राष्ट्रपति स्व॰ ए॰पी॰जे॰ अब्दुल कलाम ने अभिभावक शिक्षक एवं छात्रों के एक समूह को संबोधित करते हुये कहा था कि बच्चे को बुद्धिमान बनाना आवश्यक है परंतु उससे भी अधिक आवश्यक है उसे चरित्रवान बनाना। किसी बच्चे को चरित्रवान बनाने के लिए सबसे अधिक ज़िम्मेदारी उसकी माँ की होती है, क्योंकि माँ बच्चे कि पहली शिक्षिका होती है। तत्पश्चात स्कूल की शिक्षिका/शिक्षक की ज़िम्मेदारी होती है। उन्होंने छात्रों की तरफ इशारा करते हुये आगाह किया कि यदि आप भारत को अपराधमुक्त,भ्रष्टमुक्त एवं विकसित राष्ट्र के रूप में देखना चाहते हैं तो माता-पिता, शिक्षक एवं आप को स्वयं मूल्यपरक शिक्षा प्राप्त करनी होगी।

एक शिक्षक छात्र को फेल करने की धमकी देकर या दण्ड देने की बात कहकर कक्षा-कक्ष में कुछ देर तक के लिए बैठा सकता है परंतु उसकी अभिवृत्ति को नहीं बदल सकता है। छात्र की अभिवृत्ति को सकारात्मक बनाने के लिए उसे धार्मिक एवं आध्यात्मिक लब्धि को विकसित करना होग। छात्र में एक बार आध्यात्मिक लब्धि विकसित होने के बाद संसार की कोई वस्तु या लक्ष्य नहीं है जिसे प्राप्त न किया जा सके। आधुनिक शिक्षा में बौद्धिक लब्धि को विकसित करने में मारा-मारी है परंतु आध्यात्मिक लब्धि की ओर किसी का ध्यान नहीं है। अतः सोने की चिड़िया एवं विश्व गुरु कहे जाने वाले भारत को यदि अस्तित्व में बनाए रखना है तो प्राथमिकता के तौर मूल्य आधारित शिक्षा का बीज आरंभ से छात्रों में बोना पड़ेगा अन्यथा आने वाले वर्षों में परिणाम भयंकर होंगे।

संदर्भ :-

1) दबे जयेन्द्र (1983) शिक्षा के तात्विक आधार, अहमदाबाद यूनिवर्सिटी ग्रंथ निर्माण बोर्ड, गुजरात राज्य|
2) दबे जयेन्द्र (1994) शिक्षा चिंतकों का शिक्षा दर्शन, अहमदाबाद बी, आइस॰ शाह प्रकाशन|

3) पटेल विनोद जी॰ (1996) तत्वदर्शन और शिक्षा, सूरत: लायन गोपाल भाई बुक सेलर|
4) स्वामी सच्चिदानंद (2005) भारतीय दर्शन, अहमदाबाद: गरजर साहित्य भवन|
5) डॉ. लक्ष्मीलाल के. ओड(2008) शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,जयपुर|

**** Corresponding Author:***
डॉ. सीताराम पाल, असिस्टेंट प्रोफेसर
विशेष शिक्षा संकाय, श्रवण बधितार्थ विभाग
डॉ. शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय,मोहान रोड लखनऊ (उत्तर प्रदेश)